भासमान है, जिनकी मायासे जगत् मोहित है, जडता और असत्यता दुःखदेती है, वही भगवान् तन्मय हो मेरी रक्षा करे ॥ ३४ ॥ आपका निर्मित विश्व आनंद करता है, त्यागतेही अशुचि होजाता है, उसके संग करते हुएभी तुम असंग हो इस कारण तुममें कोई विकार नहीं है ॥ ३५ ॥ पंचभूतके योगसे चैतन्य माननेवाले चार्वाकभी आपहीकी उपासना करते हैं

त्वत्सृष्टंमोदतेविश्वंत्वत्त्यक्तमशुचिर्भवेत् ॥ तत्संगतोप्यसंगस्त्वंविकारस्तेनतेनहि ॥ ३५ ॥ भूतयोगजचैतन्यंचार्वाकायमुपासते ॥ सौगतास्त्ववतेतकैंस्त्वांबुद्धिंक्षणभंगुराम् ॥ ३६ ॥ शरीरपरिणामंत्वांमन्यन्ते जिनदेवताः ॥ ध्यायंतिपुरुषंसांख्यास्त्वामेवप्रकृतेःपरम् ॥ ३७ ॥ जन्माद्येरहितः पूर्वैर्यःस्यादानंदलक्षणम् ॥ त्वामेवोपनिषद्ब्रह्म चिंतयंतिपरात्परम् ॥ ३८ ॥ खादिभूतानिदेहश्चमनोबुद्धींद्रियाणिच ॥ विद्याविद्येत्वमेवात्रनान्यत्त्वत्तोऽस्तिकिंचन ॥ ३९ ॥

सौगत बुद्धिसे तुमको क्षणभंगुर मानते हैं ॥ ३६ ॥ जिन देवतावाले तुमको शरीरका परिणामी मानते हैं, सांख्यवाले प्रकृतिसे परे तुमहींको पुरुष मानते हैं ॥ ३७ ॥ जो पूर्वजोंके कहे जन्मादिसे रहित आनंद लक्षण है उसीको उपनिषद्वाले ब्रह्म नामसे विचार करते हैं ॥ ३८ ॥ आकाश पंचमहाभूत देह मन बुद्धि इन्द्रिय विद्या अविद्या सब आप हो, आपसे भिन्न कुछ

१ पूर्ण चित्सदानंदलक्षणम् ।

नहिंहै ॥ ३९ ॥ आपही सब प्राणियोंके विधाता आपही मुझे शरण देनेवाले अग्नि हविं इन्द्र होता मंत्र क्रिया फल सब तुम हो ॥ ४० ॥ अस्ति नास्ति वैकुंठ तुम हो, तुम्हारी मैं शरणको प्राप्त हूं, तुम कर्मफलके दाता दीक्षितोंके क्रिया फल हो ॥ ४१ ॥ तुम सब भूतोंके हेतु और तुमहीं मुझे शरण देनेवाले हो, युवतियोंको जैसे तरुणमें तरुणको जैसे तरुणीमें ॥ ४२ ॥

त्वंधातासर्वभूतानांत्वमेवशरणंमम ॥ त्वमग्निस्त्वंहविःशक्रोहोतामंत्रःक्रियाफलम् ॥ ४० ॥ त्वमस्ति नास्तिवैकुंठत्वामहंशरणंगतः ॥ त्वंकर्मफलदाताचदीक्षितानांक्रियाफलम् ॥ ४१ ॥ त्वंहेतुःसर्वभूता- नांत्वमेवशरणंमम ॥ युवतीनांयथायूनियूनांचयुवतौयथा ॥ ४२ ॥ मन[illegible]तथा[illegible]मेऽस्तु[illegible] त्वयि ॥ अपिपापंदुराचारंनरंत्वत्प्रणतं हरे ॥ ४३ ॥ नेक्षंतेकिंकरा[illegible]यथा ॥ तापत्र- यमघोघश्चतावत्पी[illegible]तेजनम् ॥ ४४ ॥ यावन्नस्मरतिनोनाथभक्त्यात्वत्पादपंकजम् ॥ ४५ ॥

मनकी प्रीति होती है, इसी प्रकार मेरी तुममें प्रीति है, हे हरे ! यदि पापी दुराचारी आपको प्रणाम करै ॥ ४३ ॥ उसको यमके दूत इस प्रकार नहीं देखसकते जैसे उल्लू सूर्यको, यह तीन ताप और पाप समूह तभीतक मनुष्यको पीडा देते हैं ॥ ४४ ॥ हे नाथ ! जबतक भक्तिसे आपके चरणकमलका स्मरण नहीं करता ॥ ४५ ॥ ॥११॥

जिसको गुण जाति शरीरके धर्म स्पर्श नहीं करते जिसको सम्पूर्ण इन्द्रियोंकी गति स्पर्श नहीं करती जिसको संगरहित मुनि मोहको त्याग स्पर्श करते हैं उन भगवान् हरिके निमित्त नमस्कार है ॥ ४६ ॥ स्थूलको करणमें करणको निदान-में विलीन करके उसके कारण साधक कारणसे वर्जित कर मुनि इस प्रकार विलीन करके उसमें प्रवेश करते हैं उन मुनि-

यंनस्पृशंतिगुणजातिशरीरधर्मायंनस्पृशंतिगतयस्त्वखिलेंद्रियाणाम् ॥ यंचस्पृशंतिमुनयोगतसंभ्रमो-
हास्तस्मैनमोभगवतेहरयेकरोमि ॥ ४६ ॥ स्थूलंविलाप्यकरणेकरणंनिदानेतत्कारणंकरणकारणव-
र्जितेच ॥ इत्थंविलाप्यमुनयः प्रविशंतितत्रतस्मैनमोऽस्तुहरयेमुनिसेविताय ॥ ४७ ॥ यद्ध्यानसं-
वहनघूर्णवशीकृतांतामैश्वर्यचारुगुणिनींसुखमोक्षलक्ष्मीम् ॥ आलिंग्यशेरतइहात्मसुखैकभाजस्तस्मै
नमोस्तुहरयेमुनिसेविताय ॥४८ ॥ जन्मादिभावविकृतेर्विरहस्वभावेयास्मिन्नयंपरिधुनोतिषडूर्मिवर्गः ॥
यंतापयंतिनसदामदनादिदोषास्तंवासुदेवममलंप्रणतोऽस्मि हार्दम् ॥ ४९ ॥

सेवित हरि भगवान्के निमित्त नमस्कार है ॥ ४७ ॥ जिनके ध्यान धारणासे अन्तःकरण वश करके ऐश्वर्यसे सुन्दर सुख भोग लक्ष्मीको प्राप्त होते हैं अर्थात् यहां आत्मसुख को प्राप्त हो मुक्तिको आलिंगन किये सोते हैं उन मुनि सेवित हरिके निमित्त नमस्कार है ॥ ४८॥ जन्मादि भावसे विरत विरह स्वभाववाले जिसमें कि यह काम क्रोधादि[illegible]
[illegible] जाते हैं

प्राप्त होजाता है, तथा जिसको कामादिदोष कभी ताप नहीं देते हैं उन निर्मल वासुदेवको मनसे प्रणाम करताहूं ॥ ४९ ॥ जिनके ध्यानकी संगतिसे अविद्याका मल शांत होताहै; जिसके ध्यानकी अग्निसे जगत् नश्वर होजाताहै जिसके ज्ञानकी तलवार संशय रूपी शत्रुको मारती है उन विशदबोध दुःखहारी भगवान्‌को प्रणाम करताहूं ॥ ५० ॥ सब चराचर जीव

यद्ध्यानसंगतमलंविजहात्यविद्यांयद्ध्यानवह्निपतितंजगदेतिनाशम् ॥ यज्ज्ञानखड्गसदासिद्यतिसंशया-
रिंतंत्वांहरिंविशदबोधघनंनमामि ॥ ५० ॥ चराचराणिभूतानिसर्वाणिचहरेर्वशे ॥ यथाऽत्रतेनसत्ये-
नपुरास्तिष्ठतुमेहरिः ॥ ५१ ॥ यथानारायणः सर्वंजगत्स्थावरजंगमम् ॥ तेनसत्येनमेरूपंप्रदर्शयतुके-
शवः ॥५२॥ भक्तिर्यथाहरौमेऽस्तितद्वरिष्ठागुरौयादि ॥ ममास्तितेनसत्येनस्वंदर्शयतुकेशवः ॥ ५३ ॥
तस्यैवंशपथैः सत्यैर्भक्तिंतस्यानुचिन्तयन् ॥ दर्शयामासचात्मानंसप्रीतःपुरुषोत्तमः ॥ ५४ ॥

हरिके वशमें हैं, जैसे यहां तो इसी सत्यसे भगवान् सन्मुख हो मुझे दर्शन दें ॥ ५१ ॥ जैसे नारायण स्थावर जंगम जगत्‌को व्याप्त कर रहे हैं उसी सत्यसे केशव मुझे दर्शन दें ॥ ५२ ॥ जैसे नारायणमें और उनसे अधिक गुरुमें मेरी भक्ति है तो इस सत्यसे नारायण मुझको दर्शन दें ॥५३ ॥ इस प्रकार शपथोंसे उसकी भक्ति विचारते हुए पुरुषोत्तम भगवान्‌ने

प्रसन्न हो दर्शन दिया ॥ ५४ ॥ फिर उनको वर दे मनोरथ पूर्ण कर ब्राह्मणकी स्तुतिसे प्रसन्न हो भगवान् गये ॥ ५५ ॥
कृत कृत्य हो ब्राह्मण भी वासुदेव परायण हुआ और शिष्योंके साहित उस स्तोत्रको जपता उस आश्रममें रहनेलगा॥ ५६॥
जो इस स्तोत्रको कहते वा जो मनुष्य सुनते हैं उनको अश्वमेधयज्ञका बडा फल मिलता है ॥ ५७ ॥ वह ब्राह्मण सदा

ततोदत्त्वावरंतस्यपूरयित्वामनोरथम् ॥ जगामकमलाकांतः स्तुत्याविप्रेणतोषितः ॥ ५५ ॥
कृतकृत्योद्विजःसोऽपिवासुदेवपरायणः ॥ शिष्यैःसार्धंजपन्स्तोत्रंतस्मिन्नास्तेतपोवने ॥ ५६ ॥ कीर्त-
येद्यइदं स्तोत्रं शृणुयाद्योऽपिमानवः ॥ अश्वमेधस्ययज्ञस्यप्राप्नोतिविपुलंफलम् ॥ ५७ ॥
आत्मविद्याप्रबोधंचलभते ब्राह्मणःसदा ॥ नपापेजायतेबुद्धिर्नैवपश्यत्यमंगलम् ॥ ५८ ॥ बुद्धिस्वा-
स्थ्यंमनःस्वास्थ्यंस्वास्थ्यमैंद्रियकं तथा ॥ नृणांभवतिसर्वेषामस्यस्तोत्रस्यकीर्तनात् ॥ ५९ ॥ विचा-
र्यार्थंजपेद्यस्तुश्रद्धयातत्परोनरः ॥ सविधूयेहपापानिलभतेवैष्णवंपदम् ॥ ६० ॥

आत्मविद्याके प्रबोधको प्राप्त होता है, न पापमें बुद्धि होती न अमंगल देखताहै ॥ ५८ ॥ बुद्धि मन इन्द्रिय स्वस्थ होती
हैं उन सब मनुष्योंकी जो इस स्तोत्रका पाठ करते हैं ॥ ५९ ॥ जो मनुष्य श्रद्धासे अर्थ [illegible] रकर तत्पर [illegible] जपते हैं

भा. मा. वह वहां पापोंको दूर करके वैष्णवपदको प्राप्त होते हैं ॥ ६० ॥ पुत्र पौत्र पशु तथा वांछित कामनाओंको प्राप्त होते हैं दीर्घ भा. टी.
आयु बल वीर्य पाठ करनेसे सदा मिलता है ॥ ६१ ॥ सहस्रतिलपात्र और गोदानका जो फल है इसस्तुतिके कीर्तन अ० १९
७९३॥ करनेवालेको प्राप्त होताहै ॥ ६२ ॥ धर्म अर्थ काम मोक्ष जिस जिस वस्तुकी इच्छा करे वह स्तोत्रसे बहुत शीघ्र प्राप्त

लभतेवांछितान्कामान्पुत्रपौत्रान्पशूंस्तथा ॥ दीर्घमायुर्बलंवीर्यंलभते सततं ॥ ६१ ॥ तिलपात्र-
सहस्रेणगोसहस्रेणयत्फलम् ॥ तत्फलंसमवाप्नोतियइमांकीर्तयेत्स्तुतिम् ॥ ६२ ॥ धर्मार्थकाममोक्षाणां
यंयंकामयतेसदा ॥ अचिरात्तमवाप्नोतिस्तोत्रेणानेनमानवः ॥ ६३ ॥ आचतुर्विनयेधर्मेज्ञानेतपसि
सञ्चये ॥ नृणांभवतिनित्यंधीरिमांसंशृण्वतांस्तुतिम् ॥६४॥ महापातकयुक्तो वा युक्तोवाह्युपपातकैः ॥
सद्योभवतिशुद्धात्मास्तोत्रस्यपठनात्सकृत् ॥ ६५॥ प्रज्ञालक्ष्मीयशःकीर्तिज्ञानधर्मविवर्धनम् ॥ दुष्ट- ॥९१॥
ग्रहोपशमनंसर्वाशुभविनाशनम् ॥ ६६ ॥

होते हैं, इसमें सन्देह नहीं ॥ ६३ ॥ आचार विनय धर्म ज्ञान तप नीति बुद्धि इसके सुननेसे मनुष्योंको नित्य होतीहै॥ ६४॥
महापातक वा उपपातकसे युक्त इस स्तोत्रके पढनेसे शीघ्र शुद्ध होता है ॥ ६५॥ प्रज्ञा (बुद्धि) लक्ष्मी यश कीर्ति ज्ञान धर्म

वृद्धि होती है दुष्ट ग्रहका फल और सब अशुभ शीघ्र निवारण होते हैं ॥ ६६ ॥ सब व्याधिका हरनेवाला पथ्यरूप सब अरिष्टका नाशक कठिनाईसे तारनेवाला स्तोत्र ब्राह्मणोंको पढना चाहिये ॥ ६७॥ नक्षत्र ग्रह पीडा राजचोरभय अग्निचोर-भयमें शीघ्र इसको पढे ॥ ६८ ॥ सिंह व्याघ्र और अभिचार (टोटका) का भय नहीं होता भूत प्रेत पिशाच राक्षसोंसे

सर्वव्याधिहरंपथ्यंसर्वारिष्टनिषूदनम् ॥ दुर्गतेस्तरणं स्तोत्रंपठितव्यंद्विजातिभिः ॥ ६७ ॥ नक्षत्रग्रह-पीडासुराजचोरभयेषुच ॥ अग्निचोरनिपातेषुसद्यःसंकीर्तयेदिदम् ॥ ६८ ॥ सिंहव्याघ्रभयंनास्तिना-भिचारभयंतथा ॥ भूतप्रेतपिशाचेभ्योराक्षसेभ्यस्तथैवच॥६९॥ पूतनाजृंभकेभ्यश्चविघ्नेभ्यश्चैवसर्वदा ॥ नृणांकचिद्भयंनास्तिस्तवेह्यस्मिन्प्रकीर्तिते ॥ ७०॥ वासुदेवस्यपूजांयः कृत्वास्तोत्रमुदीरयेत् ॥ लिप्य-तेपातकेर्नासौपद्मपत्रमिवांभसा ॥ ७१ ॥ गंगादिपुण्यतीर्थेषुयास्नानैर्नाप्यतेगतिः ॥ तांगतिसमवाप्नोति पठन्पुण्यामिमांस्तुतिम् ॥ ७२ ॥

भय नहीं होता ॥ ६९॥ पूतना जृंभक तथा अन्य विघ्नोंसे उनको भय नहीं होता जो इस स्तोत्रको पढते हैं ॥७० ॥ जो वासुदेवकी पूजा कर इस स्तोत्रको पढै वह पातकोंसे लिप्त नहीं होता जैसे पद्मपत्र जलसे ॥ ७१ ॥ गंगादि पुण्यतीर्थोंमें

स्नानसे जो गति है वह गति इस स्तुतिके पाठसे मिलती है ॥ ७२ ॥ एक दो तीन वा सर्व कालोंमें जो इसको पढै वह अक्षय सुख पाता है ॥ ७३ ॥ चार वेदोंकी तीन आवृत्तिका जो फल है वह फल एकवार इस स्तोत्रके पढनेसे मनुष्यको प्राप्त होताहै ॥ ७४ ॥ अक्षय धन प्राप्त होकर स्त्रीजनोंका प्यारा होताहै श्रद्धासे नारायणको

एककालंद्विकालंवात्रिकालंवापियः पठेत् ॥ सर्वदासर्वकालेषुसोऽक्षयंसुखमश्नुते ॥ ७३ ॥ चतुर्णाम-पिवेदानां त्रिरावृत्त्याचयत्फलम् ॥ तत्फलंलभतेस्तोत्रमधीयानः सकृन्नरः ॥ ७४ ॥ अक्षय्यंधनमा-प्नोतिस्त्रीणांभवति वल्लभः ॥ पूजांविंदतिलोकेऽस्मिञ्छ्रद्धयासंस्मरन्हरिम् ॥ ७५ ॥ सर्वदासंपदायुक्तो विपदंनैवगच्छति ॥ गोभिर्नह्रियतेस्तोत्रंनित्यंयः कीर्तयेद्धियत ॥ ७६ ॥ अलक्ष्मीकालकर्णीचदुःस्व-प्नंदुर्विचिंतितम् ॥ सद्योनश्यंति भक्तानामेतंसंशृण्वतांस्तवम् ॥ ७७ ॥ प्रातरुत्थाययोऽधीतेशुचिर्वि-ष्णुपरायणः ॥ अक्षय्यंलभतेसौख्यमिहलोकेपरत्रच ॥ ७८ ॥

स्मरण करनेसे इस लोकमें सत्कार पाता है ॥ ७५ ॥ सदा सम्पत्तिसे युक्त होकर विपत्तिको प्राप्त नहीं होता इस स्तोत्रका पढनेवाला इन्द्रियोंके वशीभूत नहीं होता ॥ ७६ ॥ अलक्ष्मी कालकर्णी दुःस्वप्न दुर्विचिन्तना इस स्तोत्रके सुनतेही वह भक्तोंकी व्याधी दूर होती है ॥ ७७ ॥ प्रातःकाल उठ विष्णुपरायण हो पवित्रतासे जो इसको

पढते हैं इस लोक और परलोकमें अक्षय सुखको लेते हैं ॥ ७८ ॥ यह देवद्युतिका निर्मित स्तोत्र विष्णुकी प्रीति करने-
वाला है विष्णुकी प्रसन्नता और उनके दर्शन करानेवाला है ॥ ७९ ॥ यह योगसार नामक परम पावन - स्तोत्र है जो
निरन्तर भक्तिसे पढे वह विष्णुलोकको जाता है ॥ ८० ॥ इस प्रकार यह स्तोत्र गुह्य और पापका नाशक है अब

देवद्युतिप्रणीतंवैविष्णुप्रीतिकरंशुभम् ॥ विष्णुप्रसादजननंविष्णुदर्शनकारकम् ॥ ७९ ॥ योगसार-
मिदंनामस्तोत्रंपरमपावनम् ॥ यः पठेत्सततंभक्त्याविष्णुलोकंसगच्छति ॥ ८० ॥ इतितेकथितं स्तोत्रं
गुह्यंपापप्रणाशनम् ॥ अतऊर्ध्वंप्रवक्ष्यामिपिशाचस्यविमोचनम् ॥ ८१ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेमाघमा-
हात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादेयोगसारस्तोत्रकथनंनामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ वसिष्ठ उवाच ॥ शृणु-
तांयेपिशाचाश्चमोचितास्तेनतद्वने ॥ आसीद्राजाचित्रनामाद्राविडेविषयेपुरा ॥ १ ॥ सोमान्वयेमहावीरः
शूरः शस्त्रास्त्रपारगः ॥ गजवाजिरथौघैश्चसंपन्नोविक्रमीसदा ॥ २ ॥

इसके आगे पिशाचमोचन कहता हूं ॥ ८१ ॥ इति श्रीपाद्मे माघमाहात्म्ये पंडितज्वालाप्रसादमिश्रकृतभाषाटीकायां योग-
सारस्तोत्रकथनं नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ ॥ वसिष्ठजी बोले सुनो जो पिशाच उसने वनमें मुक्त किया पहले
द्रविडदेशमें चित्ररथ नामवाला एक राजा था ॥ १ ॥ वह चंद्रवंशी महावीर शूर शस्त्र अस्त्रका पारगामी गज वाजी रथोंके

समूहसे सम्पन्न सदा विक्रमी ॥ २ ॥ जिसका कोश सुवर्ण और नाना रत्नोंसे पूर्ण था सहस्र नारियोंके बीचमें सदा क्रीडा करताथा ॥ ३ ॥ लोलुप कामी लोभी महाक्रोधी वह राजा मंत्रियोंके कहे धर्मयुक्त वचन कभी नहीं मानता था ॥ ४ ॥ विष्णुकी निंदा विष्णु भक्तोंका सदा द्वेष करताथा, कौन विष्णु किसने देखा है कहां है कौन उसको कहता है ॥

स्वर्णैर्नानाविधैरत्नैः पूर्णकोशोमहाधनः ॥ मध्येनारीसहस्रस्यसदाक्रीडातितत्परः ॥ ३ ॥ लुब्धः कामी सदालुब्धश्चंडकोपः सपार्थिवः ॥ नकरोतिवचोधर्म्यंसचिवैः समुदीरितम् ॥४॥ विष्णुं निंदति पापात्मा वैष्णवान्द्वेष्टिसर्वदा ॥ कोऽसौविष्णुःकदृष्टोसौक्वास्तेकेनकीर्त्यते ॥ ५ ॥ इत्थंनसहतेविष्णुंसराजादैवमोहितः ॥ नारायणंभजंतेयेतान्पीडयातिकोपितः ॥ ६ ॥ नब्राह्मणान्नवेदांश्चवैदिकंकर्मनव्रतम् ॥ नदानंमन्यतेदातुंपाखंडस्थितिसंस्थितः ॥ ७ ॥ अनीत्याचंडदंडैश्चप्रजापीडांकरोतिसः ॥ निष्ठुरो निर्दयः क्रूरःपुण्यकार्यपराङ्मुखः ॥ ८ ॥

॥ ५ ॥ इस प्रकार दैवमोहित हुआ वह राजा विष्णुको नहीं सहसकता था जो नारायणका भजन करते उनको पीडा देताथा क्रोध करताथा ॥६॥ न ब्राह्मण न वेद न वैदिक कर्म न व्रत न दान देनेवालेको माने इस प्रकार पाखंडस्थितिमें स्थित था ॥ ७ ॥ अनीतिसे कठिन दण्ड देकर प्रजाको पीडित करताथा निठुर निर्दयी क्रूर पुण्यकर्मसे ॥९५॥

पराङ्मुख ॥ ८ ॥ आचारहीन हरिद्वेषी अग्निहोत्र तथा क्रियासे दीन दूसरे कालकी समान वह अपने प्रजाकी शासना करताथा ॥ ९ ॥ तब बहुत दिनोंके उपरान्त राजा मृत्युको प्राप्त हुआ वैदिक विधानसे उसकी ऊर्ध्व दैहिक क्रिया न हुई ॥ १० ॥ तब यमराजके दूतसमूहोंसे पीडित हुआ लोहेकी कीलोंवाले मार्गमें जहां जलता रेता पूर्ण था ॥ ११ ॥ सूर्य-

च्युताचारोऽच्युतद्वेष्टाच्युताग्निश्च च्युतक्रियः ॥ सोऽन्वशास्तिजनंभूपःकालरूपइवापरः ॥ ९ ॥ ततो बहुतिथेकालेसराजापंचतांगतः ॥ वैदिकेन विधानेनलेभेनैवोर्ध्वदैहिकम् ॥ १० ॥ अथाकिंकरयूथै-र्नपीड्यमानोभृशंतदा ॥ अयःकीलमयेमार्गेतप्तसिकताप्रपूरिते ॥ ११ ॥ चंडार्करश्मिसंतप्तेवृक्षच्छा-याविवर्जिते ॥ तप्तांगारप्रपूर्णेचवह्निज्वालासमाकुले ॥ १२ ॥ लोहतुंडैश्चकाकोलैर्हन्यमानःसुदारुणैः ॥ वृकैर्दंष्ट्राकरालैश्चश्वभिर्घोरैश्चभक्षितः ॥ १३ ॥ शृण्वन्क्रंदितमन्येषांनृणांकिल्बिषकारिणाम् ॥ जगामपार्थिवोलोकमंतकस्यभयावहम् ॥ १४ ॥

की किरणें जहां ताप देतीथीं वृक्षोंकी छायासे हीन तप्त अंगारसे पूर्ण अग्निकी ज्वालासे समाकुल ॥ १२ ॥ लोहतुण्ड और दारुण काकोलसे वारंवार पीडित कराल डाढोंवाले वृक और घोर कुत्तोंसे भक्षित ॥ १३ ॥ जहां दूसरे पापियोंका

घार शब्द सुनाई आताथा, इस प्रकार वह राजा यमलोकको गया ॥ १४ ॥ हे राजन् ! उस लोककी उसकी दुस्सह गति
सुनो क्रमसे वह राजा नरकसे नरकको गया ॥ १५ ॥ प्रथम महादुःखदायक तामिस्र नरकको गया, फिर निरन्तर
दुःखवाले अंधतामिस्रमें गया ॥ १६ ॥ फिर महा रौरव रौरवनामक महानरकमें गया, और कालसूत्र महानरकमें गया

शृणुभूपगतिंतरयतस्मिँल्लोकेसुदुःसहाम् ॥ निरयान्निरयंयातःपर्यायेणसभूपतिः ॥ १५ ॥ आदौप्रयात-
स्तामिस्रेदारुणेभूरिदुःखदे ॥ पुनश्चैवांधतामिस्रेयत्रदुःखंनिरंतरम् ॥ १६ ॥ गतोऽनंतरमत्युग्रंमहारौर-
वरौरवम् ॥ नरकंकालसूत्रंचमहानरकमेवच ॥ १७ ॥ पश्चान्मग्नःसभूपालोदुस्तरेदुःखमूर्च्छितः ॥
संजीवनेमहावीचौतापनेसंप्रतापने ॥ १८ ॥ पपातनरकेराजादुःखाग्निप्लुष्टमानसः ॥ संतापंचसकाको-
लंकुड्मलंपूतिमृत्तिकम् ॥ १९ ॥ लोहशंकुंमृगीयंत्रंपंथानंशाल्मलिंनदीम् ॥ प्रविष्टोऽथमहाभीमंदु-
र्दर्शंदुर्गमंपुनः ॥ २० ॥ असिपत्रवनंचैवलोहचारकमेवच ॥ एवंनतेषुसर्वेषुपातितःपापकृन्नृपः ॥ २१ ॥

॥ १७ ॥ फिर दुस्तर दुःखमें मग्न होनेसे वह राजा मूर्च्छित हुआ फिर चैतन्य होने पर तापन संप्रतापन नरकको गया ॥१६॥
॥ १८ ॥ दुःखकी अग्निसे व्याकुल हो राजा नरकोंमें पडा, प्रपात संपात काकोल कुड्मल पूति मृत्तिका ॥ १९ ॥
लोहशंकु मृगीयंत्र शाल्मली मार्ग शाल्मलीनदी फिर महा भीम दुर्गम मार्गमें प्रविष्ट हुआ ॥ २० ॥ [illegible] वन

वाले कौन हो क्यों दारुण रोते हो यह अवस्था क्यों हुई कहो मैं तुम्हारा क्या प्रिय करूं ॥ ५ ॥ मेरे आश्रममें प्रविष्ट होकर प्राणी दुःख नहीं पातेहैं वैष्णव भवनकी समान सब आनंद करते हैं ॥ ६ ॥ हे भद्र! तुम शीघ्र इस दुःखका कारण कहो बुद्धिमान्‌ अर्थके प्राप्त होनेमें कालक्षेप नहीं करते हैं ॥ ७ ॥ वशिष्ठ बोले यह वचन सुनकर वह पिशाच रोदन त्याग कर दीन और

ममाश्रमप्रविष्टा हिदुःखभाजोनजंतवः ॥ मोदंतेकेवलंसर्वेवैष्णवेभवनेयथा ॥ ६ ॥ वदत्वंसत्वरंभद्रदुःखस्यैतस्यकारणम् ॥ कालक्षेपंनकुर्वंतिप्राप्तेर्थेह्यमनीषिणः ॥ ७ ॥ वसिष्ठउवाच ॥ श्रुत्वैतद्वचनंप्रीतः पिशाचस्त्यक्तरोदनः ॥ उवाचदीनयावाचाप्रश्रयावनतस्तदा ॥ ८ ॥ पिशाचउवाच ॥ सर्वांगव्यापिसंतापंजहारत्वद्वचोमम ॥ ग्रीष्मेदावानलोद्भूतंवर्षन्मेघइवाचले ॥ ९ ॥ यन्मेऽस्तिसुकृतंकिंचित्तेनदृष्टोऽसिमेद्विज ॥ नह्यसंचितपुण्यानांसद्भिरेकत्रसंगमः ॥ १० ॥ इत्युक्त्वाकथयामासपूर्ववृत्तांतमात्मनः ॥ विष्णुद्वेषप्रदोषेणदशामेतामहंगतः ॥ ११ ॥

नम्र होकर यह वचन कहने लगा ॥ ८ ॥ पिशाच बोला मेरे सम्पूर्ण अंगमें व्यापी तापको तुम्हारे वचनने हरण कर लिया ॥ ९ ॥ कोई मेरा बडा सुकृत है इस कारण तुम्हारा दर्शन हुआ। विना पूर्व जन्मके पुण्यके सत्पुरुषोंका दर्शन नहीं होता ॥ १० ॥ ऐसा कह अपना वृत्तान्त कथन करता हुआ कि, विष्णु भगवान्‌से द्वेष करनेके निमित्त मैं इस दशाको प्राप्त हुआ हूं ॥ ११ ॥

प्राणान्तके समय जिनका नाम स्मरण कर मनुष्य मुक्त हो जाते हैं हे द्विज ! मुझ पापिष्ठीका सदा उन हरिसे द्वेष रहा ॥ १२॥ जो प्राणियोंको पालन करता है जिससे त्रिलोकीमें धर्म प्राप्त होता है जो भूतोंका अन्तरात्मा है उसमें मेरा द्वेष हुआ ॥ १३॥ जो कर्मका फल वेदोंमें गाया जाता है जो तप द्वारा ब्राह्मणोंसे यजन किया जाता है उनसे मैंने द्वेष किया

यन्नामप्राणान्तमुक्तोहिस्मृत्वाविष्णुपदंव्रजेत् ॥ पापिष्ठोहिहरौतस्मिन्ममद्वेषोभवेद्द्विज ॥ १२ ॥ यःपाल-
यतिभूतानिधर्मंयातिजगत्त्रये ॥ योंतरात्माचभूतानांतस्मिन्द्वेषोममाभवत् ॥ १३ ॥ कर्मणांफलदोयो-
त्रसर्ववेदेषुगीयते ॥ तपोभिरिज्यतेविप्रैःसमेद्वेषपदंगतः ॥ १४ ॥ त्यक्तक्रियैःप्रियारण्यैर्निःसंगैकचरै-
श्चयः ॥ वेदान्तियातिभिश्चिन्त्यःसमेद्वेषीहरिर्द्विज ॥ १५ ॥ ब्रह्मादयःसुराःसर्वेयोगिनःसनकादयः ॥
मुक्त्यर्थमर्चयंतीहसविष्णुर्द्वेषितो मया ॥ १६ ॥ आदौमध्येऽवसानेयोविश्वधातासनातनः ॥ यस्यनैवा-
दिमध्यांताःसमेद्वेषपदंययौ ॥ १७ ॥

॥१४॥ क्रिया त्यागी वनवासी निस्संगचारी वेदान्ती यतियोंसे जो चिन्तनीय हैं उन हरिभगवान्से मैंने द्वेष किया॥ १५॥ ब्रह्मादि सब देवता योगी सनकादिक मुक्तिके निमित्त जिनका चिन्तन करते हैं उन हरिसे मैंने द्वेष किया ॥ १६॥ आदि

लोहचारक इत्यादि सभी नरकोंमें वह पापी राजा गया ॥ २१ ॥ और नरकोंमें घोर यातनाको प्राप्त हुआ विष्णुके द्वेषसे इक्कीस युगतक ॥ २२ ॥ यातना भोग कर नरकसे निकला गिरिराजपर महापिशाच योनिको प्राप्त हुआ ॥ २३ ॥ उस वनमें भूखा हुआ सब दिशाओंमें फिरताथा उसको मेरु पर्वतमें भी तो भोजन जल नहीं दीखताथा ॥

अविंदन्नरके घोरेसंतापंयातनामयम् ॥ विष्णुप्रद्वेषघोषेणयुगानामेकविंशतिः ॥ २२ ॥ भुक्त्वाचया-तनांयाभ्यांनिस्तीर्णनरको नृपः ॥ समयाद्गिरिराजेतुपिशाचोऽभूत्तदामहान् ॥२३॥ सभ्राम्यतिदिशः सर्वांवनेतस्मिन्बुभुक्षितः ॥ नपश्यत्यशनंतोयंमेरावपिसदागिरौ ॥ २४॥ कदाचित्पर्यटन्सोऽथपिशाचः शोकपीडितः ॥ प्लक्षप्रस्रवणारण्यंप्रविष्टोभाविसत्फलम् ॥ २५ ॥ विभीतकतरुच्छायांसमाश्रित्य सुदुःखितः ॥ हाहतोस्मीतिचाक्रंदद्घोरमुच्चैः पुनः पुनः ॥२६॥ क्षुत्तृड्भ्यांमुह्यमानस्यसर्वभूतद्रुहोमम ॥ जन्मनोस्यदुरंतस्यकथमंतोभविष्यति ॥ २७ ॥

॥ २४ ॥ एक समय वह शोकपीडित पिशाच भ्रमण करता हुआ कोई होनहार सत्फलके प्राप्त करनेको लक्षप्रस्रवण वनमें प्रविष्ट हुआ ॥ २५ ॥ बहेडेके पेडकी छायामें वह दुःखी आश्रय होकर हाय । मैं मरा ऐसे घोर शब्द करने लगा ॥ २६ ॥ क्षुधा तृषासे व्याकुल होनेके कारण मेरा सब प्राणियोंसे द्रोह है इस दुरंत जन्मका अन्त किस प्रकार होगा ॥ २७ ॥

प्रथम इस दुःख समूहरूपी पापके समुद्रमें डूबते हुए कौन मुझको हाथका अवलम्बन देगा ॥ २८॥ इति श्रीपद्मे माघमाहात्म्ये भाषाटीकायां विंशोऽध्यायः ॥ २०॥ वसिष्ठजी बोले इस प्रकार उस पिशाचका दीन स्वरसे रोदन वेद पाठ करते हुए देवद्युतिने सुना ॥ १ ॥ तब वहां आकर उसने पिशाचको देखा, विकराल मुख भयंकर नेत्र कृश शरीर ॥ २ ॥ ऊपरको जिसके बाल

आदौपापसमुद्रेऽस्मिन्दुःखकल्लोलमालिनि ॥ करावलंबनंकोऽद्यनिमग्नस्यप्रदास्यति ॥ २८ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेमाघमाहात्म्येवसिष्ठदिलीपसंवादेपिशाचाख्यानंनामविंशोऽध्यायः ॥२०॥ वसिष्ठ उवाच ॥ इत्थंतस्यपिशाचस्यरोदनंदीनचेतसः ॥ देवद्युतिरधीयानः शुश्रावकरुणामयम् ॥ १ ॥ समागम्यततस्तत्रपिशाचंचददर्शसः ॥ विकरालमुखंभीमंपिशंगनयनंकृशम् ॥ २ ॥ ऊर्ध्वमूर्धजकृष्णांगंयमदूतमिवापरम् ॥ ललज्जिह्वंचलंचोष्ठंदीर्घजंघंशिराकुलम् ॥ ३ ॥ दीर्घांघ्रिंशुष्कतुंडंचगर्ताक्षंशुष्कपंजरम् ॥ अथामुंकौतुकाविष्टः पप्रच्छमुनिपुंगवः ॥ ४ ॥ देवद्युतिरुवाच ॥ कोसित्वंभीषणाकारः कुतोरोदिषिदारुणम् ॥ अवस्थेयंकुतोब्रूहिकिंचाहंकरवाणिते ॥ ५ ॥

कृष्ण शरीर दूसरे यमदूतकी समान चलायमान जीभ और ओष्ठ दीर्घ जंघा और शिरसे व्याप्त ॥ ३॥ दीर्घ अंघ्रि सूखी तुण्ड गढेकी समान आंखें सूखा पंजर शरीर था कौतुकसे प्राप्त होकर मुनिने उससे पूंछा ॥४॥ देवद्युति बोले तुम भीषण आकार-

मध्य अंतमें जो विष्णु विधाता सनातन हैं, जिसके आदि मध्य अंत नहीं है उनसे मैंने द्वेष किया ॥ १७ ॥ जो मैंने पूर्व जन्ममें सुकृत किया वह विष्णुके द्वेषकी अग्निसे सब भस्म होगया ॥ १८ ॥ किसी प्रकार यदि मैं इस पापका अंत देखूं तो नारायणको छोडकर फिर कभी अन्य देवताका पुजन नहीं करूं ॥ १९ ॥ विष्णुके द्वेषसे मैंने बहुत कालतक नरक

यन्मयासुकृतंकर्मकृतंप्राक्तनजन्मानि ॥ विष्णुद्वेषाग्निनादग्धंतत्सर्वंभस्मसादभूत् ॥ १८ ॥ कथंचिं-दस्य पापस्यसीमांद्रक्ष्यामिचेदहम् ॥ मुक्त्वानारायणंनान्यमर्चयिष्यामिदेवताम् ॥ १९ ॥ विष्णुद्वेषा-च्चिरंभुक्त्वामयानरकयातनाम् ॥ निरयान्निःसृतःसोऽहंपैशाचींयोनिमागतः ॥ २० ॥ अधुनाकर्ममंत्रैः कैरथानीतस्त्वदाश्रमम् ॥ यत्रत्वद्दर्शनार्कान्मेनष्टंदुःखमयंतमः ॥ २१ ॥ आप्यतेमरणंयत्रबंधनंश्रीःसुखं वधूः ॥ सतत्रनीयतेस्वेनकर्मणागलहस्तिना ॥ २२ ॥ इदानीमुचितंकर्मब्रूहिपैशाच्यनाशनम् ॥ परो-पकारकार्येहिनधन्यामंदगामिनः ॥ २३ ॥

यातना भोगी, अब नरकसे निकलकर मैं पिशाची योनिको प्राप्त हुआ ॥ २० ॥ अब कर्म मंत्रसे तुम्हारे आश्रममें प्राप्त हुआ हूं, जो तुम्हारे दर्शनरूप सूर्यसे दुःखमय अधंकार दूर हो गयाहै ॥ २१ ॥ जहां मरण प्राप्ति बंधन लक्ष्मी सुख और वधू हो इन स्थानोंपर कर्म गलेमें भुजा डालकर ले जाता है ॥ २२ ॥ इस समय आप पिशाचनाशक उत्तम कर्म कहिये, परो

पकार करनेमें देर करनेवाले धन्य नहीं होते ॥ २३ ॥ देवहुति बोले—अहो! यह माया देवता, असुर, मनुष्य, सबको मोहित करती है सबकी स्मृतिको नष्ट करती है, कि जिनका देवताओंसे भी धर्म नाशी द्वेष होता है ॥ २४ ॥ जगत्के पालन उत्पत्ति नाशक महेश्वर जो कि सब भूतोंके आत्मा हैं मूढ उनसे भी द्वेष करते हैं ॥ २५ ॥ जिनके अर्पण करनेसे

देवहुतिरुवाच ॥ अहोमुष्णातिमायेयंदेवासुरनृणांस्मृतिम् ॥ ययादेवेष्वपिद्वेषोजायतेधर्मनाशनः ॥ २४ ॥ स्रष्टापालयिताहंताजगतांयोमहेश्वरः ॥ आत्माचसर्वभूतानां तंमूढोद्वेष्टिकः कथम् ॥ २५ ॥ भवंतिसर्वे· कर्माणिसफलानियदर्पणात् ॥ तद्भक्तिविमुखोमर्त्यःकोनयातीहदुर्गतिम् ॥ २६ ॥ श्रुतिस्मृतिसदाचारविहितंकर्मकेवलम् ॥ सेवितव्यंचतुर्वर्णैर्भजेन्नारायणंसदा ॥ २७ ॥ अन्यथानिरयंयातिविनाह्यागमसेवनात् ॥ अतोवेदविरुद्धार्थंशास्त्रोक्तंकर्मसंत्यजेत् ॥ २८ ॥ स्वबुद्धिरचितैःशास्त्रैःप्रतार्यैहतुबालिशान् ॥ विघ्नंतिश्रेयसोमार्गंलोकनाशायकेवलम् ॥ २९ ॥

सब कर्म सफल होते हैं उनकी भक्तिसे विमुख होकर कौन मनुष्य दुर्गतिको प्राप्त नहीं होता है ॥ २६ ॥ श्रुति, स्मृति, सदाचारसे जो कर्म विधान किया है नारायणका भजन करते सब वर्णोंको वह सेवन करना चाहिये ॥ २७ ॥ अन्यथा बिना शास्त्रकी सेवासे वह नरकको जाता है इस कारण वेदविरुद्ध ग्रन्थोक्त कर्मको त्याग दे ॥ २८ ॥ अपनी बुद्धिके कल्पित

ग्रन्थ मूर्खोंको छलते हैं, वह कल्याणके मार्गमें विघ्न करते केवल लोकनाशके निमित्त हैं ॥ २९ ॥ जो विष्णु वेद तप सद्ब्राह्मणोंकी निन्दा करते हैं, इस कारण वे असद्ग्रन्थोंके सेवन करनेसे नरकको जाते हैं ॥ ३० ॥ अहो सन्मार्गमें निष्ठावाले सच्चरित राजाको विधिवशसे कुमार्ग आकुलनी मति प्राप्त हुई ॥ ३१ ॥ असत्पुरुषोंकी संगतिसे किसको विपत्ति

विष्णुंनिंदंतिवेदांश्चतपोनिंदंतिसद्द्विजान् ॥ तेनतेनरकंयांतिह्यसच्छास्त्रनिषेवणात् ॥ ३० ॥ अहोसन्मार्गेनिष्ठस्यसच्चरित्रस्यभूपतेः ॥ जाताविधिवशाद्दुष्टाकुमार्गाकुलिनीमतिः ॥ ३१ ॥ असत्संगतिःकस्यमूलंनविपदांभवेत् ॥ श्रुतिस्मृतिसदाचारविहितंशाश्वतंपरम् ॥ ३२ ॥ स्वस्वधर्मंप्रयत्नेनश्रेयोर्थीहसदाचरेत् ॥ स्वबुद्धिरचितैःशास्त्रैर्मोहयित्वाजनंजडाः ॥ ३३ ॥ हरिशंकरयोःपापाअत्रभेदंहिकुर्वते ॥ हरिहरौचधर्मात्मानभेदस्तद्वयंचरेत् ॥ ३४ ॥ अयमेवयथाराजाद्रविडोनिरयंगतः ॥ द्विपन्नारायणंदेवंदेवदेवंजगत्प्रभुम् ॥ ३५ ॥

नहीं प्राप्त होती श्रुति स्मृति सदाचारमें जो परम शाश्वत कहा है ॥ ३२ ॥ श्रेयकी इच्छा करनेवाला अपने २ धर्ममें सदा आचरण करे मूर्ख अपनी बुद्धिके रचे ग्रन्थोंसे मनुष्य जनोंको मोहित करते हैं ॥ ३३ ॥ जहां पापी हरि शंकरमें भेद करते हैं वे हरिहरमें भेदकारी पापी हैं धर्मात्माको चाहिये कि हरिहरमें भेद चिन्ता न करे ॥ ३४ ॥ इसीसे द्रविडका राजा

नरकको गया यह नारायण देवके द्वेष करनेका कारण है ॥ ३५ ॥ इस कारणसे देवताओं और विशेषकर ब्राह्मणोंमें पुण्यकी इच्छा करनेवाला द्वेष और वेदवाह्य क्रियाको त्यागन करै ॥ ३६ ॥ ऐसा कह मुनिने पिशाचको हितकर वचन कहे हे भद्र ! माघमासमें तुम प्रयागको गमन करो ॥ ३७॥ वहां तुम पिशाचत्वसे अवश्य मुक्त होगे इसमें सन्देह नहीं, वहां स्नान

तस्माद्द्वेषंहिदेवेषुब्राह्मणेषुविशेषतः ॥ संत्यजेत्पुण्यकामोत्रवेदबाह्यांक्रियांत्यजेत् ॥ ३६ ॥ इत्युक्त्वा कथयामास पिशाचायहितंमुनिः ॥ प्रयागंगच्छभोभद्रमाघमासंविचारय ॥ ३७ ॥ तत्रतेनिश्चितामुक्तिःपैशाच्यान्नात्रसंशयः ॥ तत्राप्लुतादिवंयांतिश्रुतिरेषासनातनी ॥ ३८ ॥ विजघातिनरस्तत्रप्राक्तनंकर्मदुष्कृतम् ॥ प्रयागस्नानतोनास्ति क्वाप्यन्यदधिकंपरम् ॥ ३९ ॥ प्रायश्चित्तंतपोरूपंदानरूपं क्रियात्मकम् ॥ यागयोगाधिकंविद्धिप्रयागेपापिनामपि ॥ ४० ॥ स्वर्गापवर्गयोर्द्वारंतत्पृथिव्यामपावृतम् ॥ सितासितोदवेणीयातांहित्वाभुविनापरम् ॥ ४१ ॥

करनेसे स्वर्गकी प्राप्ति होती है, यह सनातनी श्रुति है ॥ ३८ ॥ वहां मनुष्यके पूर्व जन्मके किये पाप नाश होते हैं, प्रयाग स्नानसे अधिक और कहीं पुण्य नहीं है ॥ ३९ ॥ प्रायश्चित्त तप दानरूप क्रियात्मक योग और योगसे भी अधिक सिद्धि प्रयागमें पापियोंको मिलती है ॥ ४० ॥ यह पृथ्वीमें स्वर्ग अपवर्गका खुलाहुआ द्वार है, गंगा यमुनाके संगमको छोड भूमिमें

अन्य पवित्र स्थान ऐसा नहीं ॥ ४१ ॥ पापरूपी निगडमें बँधेको छेदन करनेको यह एक कुल्हाडी है कहां तो विष्णु सूर्य तेज अग्नि गंगा यमुनाका संगम ॥ ४२ ॥ और कहां उसमें मनुष्योंके पापरूपी तृणसमूहकी आहुति, घने अंधकारके दूर होनेसे जैसे चन्द्रमा ॥ ४३ ॥ प्रकाशित होता है इसी प्रकार वेणीमें स्नान करनेसे मनुष्य पापरहित होता है मैं

पापनैगडबद्धस्यछेदनैककुठारिका ॥ क्वाविष्णुःसूर्यतेजोग्निर्गंगायामुनसंगमः ॥ ४२ ॥ क्ववराकी नृणांतुच्छापापराशितृणाहुतिः ॥ मलीमसमनध्वंसेयथाशरदिचंद्रमाः ॥ ४३ ॥ मज्जनातिपापक्षयादूर्ध्वं नरोवेणीजलाप्लुतः ॥ सितासितस्यमाहात्म्यमहंवक्तुंनतेक्षमः ॥ ४४ ॥ यत्तोयकणसंस्पृष्टो मुक्तः केरलकोद्विजः ॥ इतिवाक्यमृषेः श्रुत्वापिशाचस्तुष्टमानसः ॥ ४५ ॥ मुक्तदुःखइवप्रीतः पप्रच्छप्रणयान्मुनिम् ॥ कथंकेरलदेशीयोद्विजोमुक्तोमहामुने ॥ ४६ ॥ एतंकथयवृत्तांतंसंश्रित्यकरुणामयि ॥ ४७ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेमाघमाहात्म्येव० दि० सं० पिशाचाख्यानंनामैकविंशतितमोऽध्यायः ॥ २१ ॥

तुझसे गंगा यमुनाका माहात्म्य नहीं कह सकता ॥ ४४ ॥ जिसके जलकणके स्पर्शसे केरलवासी ब्राह्मण मुक्त होगया। यह ऋषिके वचन सुन पिशाच परम संतुष्ट मन होकर ॥ ४५ ॥ दुःख रहितकी समान प्रसन्न हो मुनिसे बोले हे महामुने ! केरलदेशी ब्राह्मण कैसे मुक्त होगया ॥ ४६ ॥ मेरे ऊपर कृपाकर यह वृत्तान्त कहो ॥ ४७ ॥ इति श्रीपाद्मे

महापुराणे माघमाहात्म्ये भाषाटीकायां पिशाचाख्यानं नाम एकविंशतितमोऽध्यायः ॥ २१ ॥ देवद्युति बोले हे पिशाच ! सुन मैं पवित्र और पुण्य कथा कहता हूं केरल देशमें वसुनामवाला वेदपारगामी ब्राह्मण था ॥ १ ॥ हिस्सेदार कुटुम्बियोंने उसका धन हरलिया इससे वह निर्धन और बंधुवर्जित था। जन्मभूमिको त्याग महादुःखमे दुःखी हुआ ॥ २ ॥ देश देशमें

देवद्युतिरुवाच ॥ पिशाचशृणुपुण्यांमेकथाकथयतः शुभाम् ॥ केरलेवसुनामात्रब्राह्मणोवेदपारगः ॥ दायादैर्हृतवित्तस्तुनिर्धनोबंधुवर्जितः ॥ जन्मभूमिंपरित्यज्यमहादुःखेनदुःखितः ॥ २ ॥ देशादेशंपरिभ्राम्यकालेनमहतापुनः ॥ प्रविश्यसमहारण्यमीषद्व्याधिप्रपीडितः ॥ ३ ॥ गच्छंस्तीर्थांतरंश्रांतः क्षुत्क्षामो विन्ध्यपर्वते ॥ दुर्भिक्षेणमृतिंलेभेनदाहंनौर्ध्वदेहिकम् ॥ ४ ॥ तेनकर्मविपाकेनतत्रैव गिरिगह्वरे ॥ प्रेतीभूतश्चिरंकालमुवासनिर्जनेवने ॥ ५ ॥

भ्रमण करते २ कुछ कालमें कुछ व्याधिसे पीडित होकर महावनमें प्रवेश किया ॥ ३ ॥ तीर्थादिमें गमन करता थका भूंखमे दुर्बल विंध्याचल पर्वतमें दुर्भिक्षके कारण मृत्युको प्राप्त हुआ। उसका दाह वा और्ध्वदेहिक क्रिया भी न हुई ॥ ॥ ४ ॥ इस कर्मविपाकसे उसी सघन पर्वतमें निर्जन वनमें चिरकालतक प्रेतरूप होकर निवास करता रहा ॥ ५ ॥

शीत और धूपसे क्लेशित निराहार जलरहित दिगंबर उपानद रहित पर्वतमें हाहाकार करता हुआ श्वास लेता ॥ ६ ॥
वायुरूपसे वह इधर उधर भ्रमण करताथा उस ब्राह्मणको न कहीं शरण और न सुखकी प्राप्ति हुई ॥ ७ ॥ दुःख-
से व्याकुल हुआ शोच करताथा उसने कहीं सद्गतिकी प्राप्ति नहीं देखी सदा दान न देनेके अपने कर्मके फलको भोगता था

शीतातपपरिक्लिष्टोनिराहारोनिरूदकः ॥ दिगंबरोव्युपानत्कोगिरिहाहेतिनिःश्वसन् ॥ ६ ॥ इतस्ततः
परिभ्राम्यन्वायुभूतःसक्लेशः ॥ द्विजोनशरणंलेभेनसुखं कुत्रचित्तदा ॥ ७ ॥ संशोचतिस्मदुःखार्तोनैवप-
श्यतिसद्गतिम् ॥ सर्वदादत्तशानंसभुंक्तेस्वंकर्मणःफलम् ॥ ८ ॥ हविर्जुह्वतिनाग्नौ येगोविंदंनार्चयंतिये ॥
अनंतेनात्मविद्यांवेसुतीर्थविमुखाश्च ये ॥ ९ ॥ सुवर्णवस्त्रतांबूलमणिमन्नंफलंजलम् ॥ आर्तेभ्योनप्रय-
च्छंतिसर्वेतेकृतहीनकाः ॥ १० ॥ ब्रह्मस्वंचपरस्वंचस्त्रीधनानिहरंतिये ॥ बलेनछद्मनावापिधूर्तांश्चपर-
वंचकाः ॥ ११ ॥

॥ ८ ॥ जो अग्निमें आहुति नहीं देते गोविन्दका पूजन नहीं करते जो आत्मविद्याको भजन नहीं करते और सुती
र्थोंसे जो विमुख हैं ॥ ९ ॥ सुवर्ण वस्त्र ताम्बूल मणि अन्न फल जल दुःखीजनोंको जो नहीं देते वे सब हीनकल्प हैं ॥
॥ १० ॥ जो ब्राह्मणका धन तथा दूसरोंका धन तथा स्त्री जातिका धन हरण करते हैं, बल वा छलसे वे धूर्त दूसरोंको ठगते

 वाले हैं ॥ ११ ॥ दांभिक कुहक चोर जो अग्निकी वृत्तिवाले हैं बालक वृद्ध स्त्रीजनोंमें जो निर्दय [illegible] करते हैं सत्य
 ॥ १२ ॥ अग्नि लगानेवाले विष देनेवाले तथा और जो झूठी साक्षी देते हैं, जो अगम्यागामी तथा ग्रामवालोंको यजन कराते
हैं ॥ १३ ॥ माता पिता भगिनी सन्तान और अपनी स्त्रीके त्याग करनेवाले जो परलोक नास्तिक और धर्मदूषक हैं ॥

दांभिकाः कुहकाश्चौरा येच पावकवृत्तयः ॥ बालवृद्धातुरस्त्रीषु निर्दयाः सत्यवर्जिताः ॥ १२ ॥ अग्निदाग-
रदाये च ये चान्ये कूटसाक्षिणः ॥ अगम्यागामिनः सर्वे ये चान्ये ग्रामयाजिनः ॥ १३ ॥ पितृमातृस्वसापत्यस्व-
दारत्यागिनश्च ये ॥ ये कृतघ्नाश्च लुब्धाश्च नास्तिका धर्मदूषकाः ॥ १४ ॥ त्यजंति स्वामिनं युद्धे त्यजंति श-
रणागतम् ॥ गवां भूमेश्च हर्तारो ये चान्ये रत्नदूषकाः ॥ १५ ॥ परापवादिनः पापा देवतागुरुनिंदकाः ॥ महा-
क्षेत्रेषु सर्वेषु प्रतिग्रहरताश्च ये ॥ १६ ॥ परद्रोहरता ये च तथा च प्राणिहिंसकाः ॥ कुत्सितग्राहिणः सर्वे ते भवं-
ति पुनः पुनः ॥ १७ ॥ प्रेतराक्षसपैशाचतिर्यग्भूसक्कयोनिषु ॥ न तेषां सुखलेशोऽस्ति इह लोके परत्र च ॥ १८ ॥

॥ १४ ॥ जो युद्धमें स्वामीका त्याग करते हैं, शरणागतको छोडते हैं गो भूमिके हरण करनेवाले रत्नोंको दूषण देनेवाले
॥ १५ ॥ पराई निन्दा करनेवाले पापी देवता और गुरुओंकी निन्दा करनेवाले महाक्षेत्रोंमें प्रतिग्रहके लेनेवाले ॥ १६ ॥
पराये द्रोही प्राणियोंके हिंसक कुत्सित दान लेनेवाले वारंवार जन्म लेते हैं ॥ १७ ॥ प्रेत राक्षस पिशाच तिरछे चलनेवाले